रामचरित्मानस

बालकाण्ड

तुलसीदासजी की दीनता और राम भक्तिमयी कविता की महिमा

*** जानि कृपाकर किंकर मोहू। सब मिलि करहु छाड़ि छल छोहू॥ निज बुधि बल भरोस मोहि नाहीं। तातें बिनय करउँ सब पाहीं॥2॥

भावार्थ:

मुझको अपना दास जानकर कृपा की खान आप सब लोग मिलकर छल छोड़कर कृपा कीजिए। मुझे अपने बुद्धि-बल का भरोसा नहीं है, इसीलिए मैं सबसे विनती करता हूँ॥2॥

*** करन चहउँ रघुपति गुन गाहा। लघु मति मोरि चरित अवगाहा॥ सूझ न एकउ अंग उपाऊ। मन मति रंक मनोरथ राउ॥3॥

भावार्थ:

मैं श्री रघुनाथजी के गुणों का वर्णन करना चाहता हूँ परन्तु मेरी बुद्धि छोटी है और श्री रामजी का चरित्र अथाह है। इसके लिए मुझे उपाय का एक भी अंग अर्थात् कुछ (लेशमात्र) भी उपाय नहीं सूझता। मेरे मन और बुद्धि कंगाल हैं, किन्तु मनोरथ राजा है॥3॥

*** मति अति नीच ऊँचि रुचि आछी। चहिअ अमिअ जग जुरइ न छाछी॥ छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई। सुनिहहिं बालबचन मन लाई॥4॥

भावार्थ:

मेरी बुद्धि तो अत्यन्त नीची है और चाह बड़ी ऊँची है, चाह तो अमृत पाने की है, पर जगत में जुड़ती छाछ भी नहीं। सज्जन मेरी ढिठाई को क्षमा करेंगे और मेरे बाल वचनों को मन लगाकर (प्रेमपूर्वक) सुनेंगे॥4॥

*** जौं बालक कह तोतरि बाता। सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता॥ हँसिहहिं कूर कुटिल कुबिचारी। जे पर दूषन भूषनधारी॥5॥

भावार्थ:

जैसे बालक जब तोतले वचन बोलता है, तो उसके माता-पिता उन्हें प्रसन्न मन से सुनते हैं, किन्तु क्रूर, कुटिल और बुरे विचार वाले लोग जो दूसरों के दोषों को ही भूषण रूप से धारण किए रहते हैं (अर्थात् जिन्हें पराए दोष ही प्यारे लगते हैं), हँसेंगे॥5॥

*** निज कबित्त केहि लाग न नीका। सरस होउ अथवा अति फीका॥ जे पर भनिति सुनत

हरषाहीं। ते बर पुरुष बहुत जग नाहीं॥6॥

भावार्थ:

रसीली हो या अत्यन्त फीकी, अपनी कविता किसे अच्छी नहीं लगती? किन्तु जो दूसरे की रचना को सुनकर हर्षित होते हैं, ऐसे उत्तम पुरुष जगत में बहुत नहीं हैं॥6॥

*** जग बहु नर सर सरि सम भाई। जे निज बाढ़ि बढ़हि जल पाई॥ सज्जन सकृत सिंधु सम कोई। देखि पूर बिधु बाढ़इ जोई॥7॥

भावार्थ:

हे भाई! जगत में तालाबों और नदियों के समान मनुष्य ही अधिक हैं, जो जल पाकर अपनी ही बाढ़ से बढ़ते हैं (अर्थात् अपनी ही उन्नति से प्रसन्न होते हैं)। समुद्र सा तो कोई एक बिरला ही सज्जन होता है, जो चन्द्रमा को पूर्ण देखकर (दूसरों का उत्कर्ष देखकर) उमड़ पड़ता है॥7॥

दोहा :

*** भाग छोट अभिलाषु बड़ करउँ एक बिस्वास। पैहहिं सुख सुनि सुजन सब खल करिहहिं उपहास॥8॥

भावार्थ:

मेरा भाग्य छोटा है और इच्छा बहुत बड़ी है, परन्तु मुझे एक विश्वास है कि इसे सुनकर सज्जन सभी सुख पावेंगे और दुष्ट हँसी उड़ावेंगे॥8॥

चौपाई :

*** खल परिहास होइ हित मोरा। काक कहहिं कलकंठ कठोरा॥ हंसहि बक दादुर चातकही। हँसहिं मलिन खल बिमल बतकही॥1॥

भावार्थ:

किन्तु दुष्टों के हँसने से मेरा हित ही होगा। मधुर कण्ठ वाली कोयल को कौए तो कठोर ही कहा करते हैं। जैसे बगुले हंस को और मेंढक पपीहे को हँसते हैं, वैसे ही मलिन मन वाले दुष्ट निर्मल वाणी को हँसते हैं॥1॥

*** कबित रसिक न राम पद नेहू। तिन्ह कहँ सुखद हास रस एहू॥ भाषा भनिति भोरि मति मोरी। हँसिबे जो हँसें नहिं खोरी॥2॥

भावार्थ:

जो न तो कविता के रसिक हैं और न जिनका श्री रामचन्द्रजी के चरणों में प्रेम है, उनके लिए भी यह कविता सुखद हास्यरस का काम देगी। प्रथम तो यह भाषा की रचना है, दूसरे मेरी बुद्धि भोली है, इससे यह हँसने के योग्य ही है, हँसने में उन्हें कोई दोष नहीं॥2॥

*** प्रभु पद प्रीति न सामुझि नीकी। तिन्हहि कथा सुनि लागिहि फीकी॥ हरि हर पद रति मति न कुतर की। तिन्ह कहँ मधुर कथा रघुबर की॥3॥

भावार्थ:

जिन्हें न तो प्रभु के चरणों में प्रेम है और न अच्छी समझ ही है, उनको यह कथा सुनने में फीकी लगेगी। जिनकी श्री हरि (भगवान विष्णु) और श्री हर (भगवान शिव) के चरणों में प्रीति है और जिनकी बुद्धि कुतर्क करने वाली नहीं है (जो श्री हरि-हर में भेद की या ऊँच-नीच की कल्पना नहीं करते), उन्हें श्री रघुनाथजी की यह कथा मीठी लगेगी॥3॥

*** राम भगति भूषित जियँ जानी। सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी॥ कबि न होउँ नहिं बचन प्रबीनू। सकल कला सब बिद्या हीनू॥4॥

भावार्थ:

सज्जनगण इस कथा को अपने जी में श्री रामजी की भक्ति से भूषित जानकर सुंदर वाणी से सराहना करते हुए सुनेंगे। मैं न तो कवि हूँ न वाक्य रचना में ही कुशल हूँ, मैं तो सब कलाओं तथा सब विद्याओं से रहित हूँ॥4॥

*** आखर अरथ अलंकृति नाना। छंद प्रबंध अनेक बिधाना॥ भाव भेद रस भेद अपारा। कबित दोष गुन बिबिध प्रकारा॥5॥

भावार्थ:

नाना प्रकार के अक्षर, अर्थ और अलंकार, अनेक प्रकार की छंद रचना, भावों और रसों के अपार भेद और कविता के भाँति-भाँति के गुण-दोष होते हैं॥5॥

*** कबित बिबेक एक नहिं मोरें। सत्य कहउँ लिखि कागद कोरें॥6॥

भावार्थ:

इनमें से काव्य सम्बन्धी एक भी बात का ज्ञान मुझमें नहीं है, यह मैं कोरे कागज पर लिखकर (शपथपूर्वक) सत्य-सत्य कहता हूँ॥6॥

दोहा :

*** भनिति मोरि सब गुन रहित बिस्व बिदित गुन एक। सो बिचारि सुनिहहिं सुमति जिन्ह कें बिमल बिबेक॥9॥

भावार्थ:

मेरी रचना सब गुणों से रहित है, इसमें बस, जगत्प्रसिद्ध एक गुण है। उसे विचारकर अच्छी बुद्धिवाले पुरुष, जिनके निर्मल ज्ञान है, इसको सुनेंगे॥9॥

चौपाई :

*** एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा॥ मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी॥1॥

भावार्थ:

इसमें श्री रघुनाथजी का उदार नाम है, जो अत्यन्त पवित्र है, वेद-पुराणों का सार है, कल्याण का भवन है और अमंगलों को हरने वाला है, जिसे पार्वतीजी सहित भगवान शिवजी सदा जपा करते हैं॥1॥

*** भनिति बिचित्र सुकबि कृत जोऊ। राम नाम बिनु सोह न सोउ॥ बिधुबदनी सब भाँति सँवारी। सोह न बसन बिना बर नारी॥2॥

भावार्थ:

जो अच्छे कवि के द्वारा रची हुई बड़ी अनूठी कविता है वह भी राम नाम के बिना शोभा नहीं पाती। जैसे चन्द्रमा के समान मुख वाली सुंदर स्त्री सब प्रकार सेसुसज्जित होने पर भी वस्त्र के बिना शोभा नहीं देती॥2॥

***सब गुन रहित कुकबि कृत बानी। राम नाम जस अंकित जानी॥ सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही। मधुकर सरिस संत गुनग्राही॥3॥

भावार्थ:

इसके विपरीत, कुकवि की रची हुई सब गुणों से रहित कविता को भी, राम के नाम एवं यश से अंकित जानकर, बुद्धिमान लोग आदरपूर्वक कहते और सुनते हैं, क्योंकि संतजन भौंरे की भाँति गुण ही को ग्रहण करने वाले होते हैं॥3॥

***जदपि कबित रस एकउ नाहीं। राम प्रताप प्रगट एहि माहीं॥ सोइ भरोस मोरें मन आवा। केहिं न सुसंग बड़प्पनु पावा॥4॥

भावार्थ:

यद्यपि मेरी इस रचना में कविता का एक भी रस नहीं है, तथापि इसमें श्री रामजी का प्रताप प्रकट है। मेरे मन में यही एक भरोसा है। भले संग से भला, किसने बड़प्पन नहीं पाया?॥4॥

***धूमउ तजइ सहज करुआई। अगरु प्रसंग सुगंध बसाई॥ भनिति भदेस बस्तु भलि बरनी। राम कथा जग मंगल करनी॥5॥

भावार्थ:

धुआँ भी अगर के संग से सुगंधित होकर अपने स्वाभाविक कड़ुवेपन को छोड़ देता है।मेरी कविता अवश्य भद्दी है, परन्तु इसमें जगत का कल्याण करने वाली रामकथा रूपी उत्तम वस्तु का वर्णन किया गया है। (इससे यह भी अच्छी ही समझी जाएगी।)॥5॥ छंद :

***मंगल करनि कलिमल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की। गति कूर कबिता सरित की ज्यों सरित पावन पाथ की॥ प्रभु सुजस संगति भनिति भलि होइहि सुजन मनभावनी भव अंग भूति मसान की सुमिरत सुहावनि पावनी॥

भावार्थ:

तुलसीदासजी कहते हैं कि श्री रघुनाथजी की कथा कल्याण करने वाली और कलियुग के पापों को हरने वाली है। मेरी इस भद्दी कविता रूपी नदी की चाल पवित्र जल वाली नदी (गंगाजी) की चाल की भाँति टेढ़ी है। प्रभु श्री रघुनाथजी के सुंदर यश केसंग से यह कविता सुंदर तथा सज्जनों के मन को भाने वाली हो जाएगी। श्मशान की अपवित्र राख भी श्री महादेवजी के अंग के संग से सुहावनी लगती है और स्मरण करते ही पवित्र करने वाली होती है। दोहाः

***प्रिय लागिहि अति सबहि मम भनिति राम जस संग। दारु बिचारु कि करइ कोउ बंदिअ मलय प्रसंग॥10 क॥

भावार्थ:

श्री रामजी के यश के संग से मेरी कविता सभी को अत्यन्त प्रिय लगेगी। जैसे मलय पर्वत के संग से काष्ठमात्र (चंदन बनकर) वंदनीय हो जाता है, फिर क्या कोई काठ (की तुच्छता) का विचार करता है?॥10 (क)॥

***स्याम सुरभि पय बिसद अति गुनद करहिं सब पान। गिरा ग्राम्य सिय राम जस गावहिं सुनहिं सुजान ॥10 ख॥

भावार्थ:

श्यामा गो काली होने पर भी उसका दूध उज्ज्वल और बहुत गुणकारी होता है। यही समझकरसब लोग उसे पीते हैं। इसी तरह गँवारू भाषा में होने पर भी श्री सीतारामजी के यश को बुद्धिमान लोग बड़े चाव से गाते और सुनते हैं॥10 (ख)॥

चौपाई :

***मनि मानिक मुकुता छबि जैसी। अहि गिरि गज सिर सोह न तैसी॥ नृप किरीट तरुनी तनु पाई। लहहिं सकल सोभा अधिकाई॥1॥

भावार्थ:

मणि, माणिक और मोती की जैसी सुंदर छबि है, वह साँप, पर्वत और हाथी के मस्तक पर वैसी शोभा नहीं पाती। राजा के मुकुट और नवयुवती स्त्री के शरीर को पाकर हीये सब अधिक शोभा को प्राप्त होते हैं॥1॥

***तैसेहिं सुकबि कबित बुध कहहीं। उपजहिं अनत अनत छबि लहहीं॥ भगति हेतु बिधि भवन बिहाई। सुमिरत सारद आवति धाई॥2॥

भावार्थ:

इसी तरह, बुद्धिमान लोग कहते हैं कि सुकवि की कविता भी उत्पन्न और कहीं होतीहै और शोभा अन्यत्र कहीं पाती है (अर्थात कवि की वाणी से उत्पन्न हुई कविता वहाँ शोभा पाती है, जहाँ उसका विचार, प्रचार तथा उसमें कथित आदर्श का ग्रहण और अनुसरण होता है)। कवि के स्मरण करते ही उसकी भक्ति के कारण सरस्वतीजी ब्रह्मलोक को छोड़कर दौड़ी आती हैं॥2॥

***राम चरित सर बिनु अन्हवाएँ। सो श्रम जाइ न कोटि उपाएँ॥ कबि कोबिद अस हृदयँ बिचारी। गावहिं हरि जस कलि मल हारी॥3॥

भावार्थ:

सरस्वतीजी की दौड़ी आने की वह थकावट रामचरित रूपी सरोवर में उन्हें नहलाए बिना दूसरे करोड़ों उपायों से भी दूर नहीं होती। कवि और पण्डित अपने हृदय में ऐसा विचारकर कलियुग के पापों को हरने वाले श्री हरि के यश का ही गान करते हैं॥3॥

***कीन्हें प्राकृत जन गुन गाना। सिर धुनि गिरा लगत पछिताना॥ हृदय सिंधु मति सीप समाना। स्वाति सारदा कहहिं सुजाना॥4॥

भावार्थ:

संसारी मनुष्यों का गुणगान करने से सरस्वतीजी सिर धुनकर पछताने लगती हैं (कि मैं क्यों इसके बुलाने पर आई)। बुद्धिमान लोग हृदय को समुद्र, बुद्धि को सीप और सरस्वती को स्वाति नक्षत्र के समान कहते हैं॥4॥

***जौं बरषइ बर बारि बिचारू। हो हिं कबित मुकुतामनि चारू॥5॥

भावार्थ:

इसमें यदि श्रेष्ठ विचार रूपी जल बरसता है तो मुक्ता मणि के समान सुंदर कविता होती है॥5॥

दोहा :

***जुगुति बेधि पुनि पोहिअहिं रामचरित बर ताग। पहिरहिं सज्जन बिमल उर सोभा अति अनुराग॥11॥

भावार्थ:

उन कविता रूपी मुक्तामणियों को युक्ति से बेधकर फिर रामचरित्र रूपी सुंदर तागे में पिरोकर सज्जन लोग अपने निर्मल हृदय में धारण करते हैं, जिससे अत्यन्त अनुराग रूपी शोभा होती है (वे आत्यन्तिक प्रेम को प्राप्त होते हैं)॥11॥

चौपाई :

***जे जनमे कलिकाल कराला। करतब बायस बेष मराला॥ चलत कुपंथ बेद मग छाँड़े। कपट कलेवर कलि मल भाँड़े॥1॥

भावार्थ:

जो कराल कलियुग में जन्मे हैं, जिनकी करनी कौए के समान है और वेष हंस का सा है, जो वेदमार्ग को छोड़कर कुमार्ग पर चलते हैं, जो कपट की मूर्ति और कलियुग के पापों के भाँड़े हैं॥1॥

***बंचक भगत कहाइ राम के। किंकर कंचन कोह काम के॥ तिन्ह महँ प्रथम रेख जग मोरी। धींग धरम ध्वज धंधक धोरी॥2॥

भावार्थ:

जो श्री रामजी के भक्त कहलाकर लोगों को ठगते हैं, जो धन (लोभ), क्रोध और काम के गुलाम हैं और जो धींगाधींगी करने वाले, धर्मध्वजी (धर्म की झूठी ध्वजा फहराने वाले दम्भी) और कपट के धन्धों का बोझ ढोने वाले हैं, संसार के ऐसे लोगों में सबसे पहले मेरी गिनती है॥2॥

***जौं अपने अवगुन सब कहऊँ। बाढ़इ कथा पार नहिं लहऊँ ॥ ताते मैं अति अलप बखाने। थोरे महुँ जानिहहिं सयाने ॥3॥

भावार्थ:

यदि मैं अपने सब अवगुणों को कहने लगूँ तो कथा बहुत बढ़ जाएगी और मैं पार नहीं पाऊँगा।

इससे मैंने बहुत कम अवगुणों का वर्णन किया है। बुद्धिमान लोग थोड़ेही में समझ लेंगे॥3॥

***समुझि बिबिधि बिधि बिनती मोरी। कोउ न कथा सुनि देइहि खोरी॥ एतेहु पर करिहहिं जे असंका। मोहि ते अधिक ते जड़ मति रंका॥4॥

भावार्थ:

मेरी अनेकों प्रकार की विनती को समझकर, कोई भी इस कथा को सुनकर दोष नहीं देगा। इतने पर भी जो शंका करेंगे, वे तो मुझसे भी अधिक मूर्ख और बुद्धि के कंगाल हैं॥4॥

***कबि न होउँ नहिं चतुर कहावउँ। मति अनुरूप राम गुन गावउँ॥ कहँ रघुपति के चरित अपारा। कहँ मति मोरि निरत संसारा॥5॥

भावार्थ:

मैं न तो कवि हूँ, न चतुर कहलाता हूँ, अपनी बुद्धि के अनुसार श्री रामजी के गुण गाता हूँ। कहाँ तो श्री रघुनाथजी के अपार चरित्र, कहाँ संसार में आसक्त मेरी बुद्धि !॥5॥।

***जेहिं मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं। कहहु तूल केहि लेखे माहीं॥ समुझत अमित राम प्रभुताई। करत कथा मन अति कदराई॥6॥

भावार्थ:

जिस हवा से सुमेरु जैसे पहाड़ उड़ जाते हैं, कहिए तो, उसके सामने रूई किस गिनती में है। श्री रामजी की असीम प्रभुता को समझकर कथा रचने में मेरा मन बहुत हिचकता है॥6॥

दोहा :

***सारद सेस महेस बिधि आगम निगम पुरान। नेति नेति कहि जासु गुन करहिं निरंतर गान॥12॥

भावार्थ:

सरस्वतीजी, शेषजी, शिवजी, ब्रह्माजी, शास्त्र, वेद और पुराण- ये सब 'नेति-नेति' कहकर (पार नहीं पाकर 'ऐसा नहीं', ऐसा नहीं कहते हुए) सदा जिनका गुणगान किया करते हैं॥12॥

चौपाई :

***सब जानत प्रभु प्रभुता सोई। तदपि कहें बिनु रहा न कोई॥ तहाँ बेद अस कारन राखा। भजन प्रभाउ भाँति बहु भाषा॥1॥

भावार्थ:

यद्यपि प्रभु श्री रामचन्द्रजी की प्रभुता को सब ऐसी (अकथनीय) ही जानते हैं, तथापि कहे बिना कोई नहीं रहा। इसमें वेद ने ऐसा कारण बताया है कि भजन का प्रभाव बहुत तरह से कहा गया है। (अर्थात भगवान की महिमा का पूरा वर्णन तो कोई कर नहीं सकता, परन्तु जिससे जितना बन पड़े उतना भगवान का गुणगान करना चाहिए, क्योंकि भगवान के गुणगान रूपी भजन का प्रभाव बहुत ही अनोखा है, उसका नाना प्रकार से शास्त्रों में वर्णन है। थोड़ा सा भी भगवान का भजन मनुष्य को सहज ही भवसागर से तार देता है)॥1॥

***एक अनीह अरूप अनामा। अज सच्चिदानंद पर धामा॥ ब्यापक बिस्वरूप भगवाना। तेहिं धरि देह चरित कृत नाना॥2॥

भावार्थ:

जो परमेश्वर एक है, जिनके कोई इच्छा नहीं है, जिनका कोई रूप और नाम नहीं है, जो अजन्मा, सच्चिदानन्द और परमधाम है और जो सबमें व्यापक एवं विश्व रूप हैं, उन्हीं भगवान ने दिव्य शरीर धारण करके नाना प्रकार की लीला की है॥2॥

***सो केवल भगतन हित लागी। परम कृपाल प्रनत अनुरागी॥ जेहि जन पर ममता अति छोहू। जेहिं करुना करि कीन्ह न कोहू॥3॥

भावार्थ:

वह लीला केवल भक्तों के हित के लिए ही है, क्योंकि भगवान परम कृपालु हैं और शरणागत के बड़े प्रेमी हैं। जिनकी भक्तों पर बड़ी ममता और कृपा है, जिन्होंने एक बार जिस पर कृपा कर दी, उस पर फिर कभी क्रोध नहीं किया॥3॥

***गई बहोर गरीब नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू॥ बुध बरनहिं हरि जस अस जानी। करहिं पुनीत सुफल निज बानी॥4॥

भावार्थ:

वे प्रभु श्री रघुनाथजी गई हुई वस्तु को फिर प्राप्त कराने वाले, गरीब नवाज (दीनबन्धु), सरल स्वभाव, सर्वशक्तिमान और सबके स्वामी हैं। यही समझकर बुद्धिमान लोग उन श्री हरि का यश वर्णन करके अपनी वाणी को पवित्र और उत्तम फल (मोक्ष और दुर्लभ भगवत्प्रेम) देने वाली बनाते हैं॥4॥

***तेहिं बल मैं रघुपति गुन गाथा। कहिहउँ नाइ राम पद माथा॥ मुनिन्ह प्रथम हरि कीरति गाई। तेहिं मग चलत सुगम मोहि भाई॥5॥

भावार्थ:

उसी बल से (महिमा का यथार्थ वर्णन नहीं, परन्तु महान फल देने वाला भजन समझकर भगवत्कृपा के बल पर ही) मैं श्री रामचन्द्रजी के चरणों में सिर नवाकर श्री रघुनाथजी के गुणों की कथा कहूँगा। इसी विचार से (वाल्मीकि, व्यास आदि) मुनियों ने पहले हरि की कीर्ति गाई है। भाई! उसी मार्ग पर चलना मेरे लिए सुगम होगा॥5॥

दोहा :

***अति अपार जे सरित बर जौं नृप सेतु कराहिं। चढ़ि पिपीलिकउ परम लघु बिनु श्रम पारहि जाहिं॥13॥

भावार्थ:

जो अत्यन्त बड़ी श्रेष्ठ नदियाँ हैं, यदि राजा उन पर पुल बँधा देता है, तो अत्यन्त छोटी चींटियाँ भी उन पर चढ़कर बिना ही परिश्रम के पार चली जाती हैं। (इसी प्रकार मुनियों के वर्णन के

सहारे मैं भी श्री रामचरित्र का वर्णन सहज ही कर सकूँगा)॥13॥

चौपाई :

***एहि प्रकार बल मनहि देखाई। करिहउँ रघुपति कथा सुहाई॥ ब्यास आदि कबि पुंगव नाना। जिन्ह सादर हरि सुजस बखाना॥1॥

भावार्थ:

इस प्रकार मन को बल दिखलाकर मैं श्री रघुनाथजी की सुहावनी कथा की रचनाकरूँगा। व्यास आदि जो अनेकों श्रेष्ठ कवि हो गए हैं, जिन्होंने बड़े आदर से श्री हरि का सुयश वर्णन किया है॥1॥ **अगला पेज...**

रामचरित्मानस

बालकाण्ड